भगवद्भक्त नित्य-निरन्तर भगवत्सेवा के परायण रहते हैं। कृष्णभावना-परायण जीव के मनोभाव और निष्कपटता को जानने वाले श्रीभगवान् उसे वह बुद्धि देते हैं, जिससे वह भक्तों के संग में उनके तत्त्व को हृदयंगम कर ले। श्रीकृष्ण-विषयक चर्चा में अलौकिक शक्ति है। यदि किसी सौभाग्यशाली को ऐसा सत्संग सुलभ है और वह इस ज्ञान के लिए प्रयत्नशील है, तो भगवत्प्राप्ति के पथ में उसकी प्रगति निश्चित है। भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन को अपनी सर्वसमर्थ सेवा के उत्तरोत्तर उत्तम स्तर को प्राप्त करने के लिए उत्साहित करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने इस नौवें अध्याय में उस रहस्य का वर्णन किया है, जो सम्पूर्ण पूर्व विषय से अधिक गोपनीय है।

भगवद्गीता का प्रथम अध्याय शेष ग्रन्थ का उपोद्घात है। दूसरे और तीसरे अध्याय में आये मोक्षोपयोगी ज्ञान को **गुह्य** (गोपनीय) कहा गया है। सातवें तथा आठवें अध्याय का विषय विशेष रूप से भक्तियोग से सम्बन्धित है। कृष्णभावनामृत का प्रकाशक होने से यह प्रकरण **गुह्यतर** (अधिक गोपनीय) है। परन्तु नौवें अध्याय में तो केवल शुद्धभक्ति का वर्णन है। इसलिए यह अध्याय **परम गुह्यतम्** (परम गोपनीय) है। श्रीकृष्ण के परम गोपनीय ज्ञान से युक्त महानुभाव निस्सन्देह प्रकृति से परे हो जाता है; प्राकृत जगत् में रहते हुए भी उसे कोई सांसारिक दुःख नहीं सताता। 'भक्तिरसामृतसिन्धु' में कथन है कि जो पुरुष वास्तव में सदा श्रीभगवान् की प्रेममयी सेवा के लिए उत्कण्ठित रहता है, वह संसार-बन्धन में प्रतीत होने पर भी वास्तव में मुक्त है। भगवद्गीता के दसवें अध्याय में श्रीभगवान् ने स्वयं कहा है कि जो इस प्रकार भक्तियोग के परायण है, वह पुरुष जीवन्मुक्त है।

इस प्रथम श्लोक का विशेष महत्त्व है। **इदं ज्ञानम्** का अभिप्राय शुद्ध भक्तियोग से है। श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और सर्वात्म-समर्पण—भक्तियोग के इन नौ अंगों के आचरण से कृष्णभावनामृत प्राप्त होती है। हृदय-शुद्धि हो जाने पर ही इस कृष्णविज्ञान को जाना जा सकता है। केवल यह जानना पर्याप्त नहीं कि जीवात्मा अप्राकृत है। यह तो भगवत्प्राप्ति के पथ का केवल प्रथम चरण है। वास्तव में जीव के लिए शारीरिक क्रियाओं और अप्राकृत क्रियाओं के भेद को जानना आवश्यक है; इससे यह जागृति होती है कि 'मैं देह नहीं हूँ।'

सातवें अध्याय में श्रीभगवान् की ऐश्वर्यशालिनी सामर्थ्य, परा-अपरा आदि नाना शक्तियों और इस प्राकृत सृष्टि का वर्णन हुआ । सम्प्रति, नौवें और दसवें अध्याय में भगवान् की कीर्ति का गान है।

अनसूयवे पद बहुत महत्त्वपूर्ण है। सामान्यतः उच्च विद्वान् होने पर भी गीता के प्रायः सभी व्याख्याकार भगवान् श्रीकृष्ण से ईर्ष्या करते हैं। बड़े से बड़े विद्वान् तक भगवद्गीता की बिल्कुल अशुद्ध व्याख्या कर बैठते हैं। उनके भाष्य बिल्कुल निरर्थक हैं, क्योंकि वे श्रीकृष्ण के प्रति ईर्ष्या से भरे हैं। भगवद्भक्तों द्वारा रचित टीकायें ही प्रामाणिक मान्य हैं। जो श्रीकृष्ण से ईर्ष्या करता है, वह न तो भगवद्गीता का वर्णन